पहला अध्यापक

❑ सरिता सिंह

इस छोटी-सी आत्मकथात्मक पुस्तक में एक बच्चे की नजर से गांव, स्कूल और अध्यापक की भूमिका को देखा गया है । पुस्तक में एक अत्यंत पिछले अंचल से शिक्षित होकर निकलने वाली पहली पीढ़ी के अनुभवों की मार्मिक अभिव्यक्ति है । साथ ही बच्चों में अन्तर्निहित संभावनाओं के बारे में भी यह पुस्तक भरोसा जगाती है । कोई एक समर्पित शिक्षक को कैसे विस्मृत कर देता है, इस विडम्बना को यहां गहरी वेदना से उठाया गया है ।

'पहला अध्यापक' चंगीज आइत्मातोव की एक औपन्यासिक कृति है । इस संक्षिप्त उपन्यास का कथानक कुछ इस प्रकार है : किरगीजिया की एक विशाल घाटी में कुरकुरेव नाम का एक छोटा-सा गांव है । यहां का जीवन प्राचीन, जातीय, पितृसत्तात्मक परम्पराओं के ढर्रे पर चल रहा है। ऐसा ही जीवन आल्तीनाई नाम की, 14 साल की युवती की भी राह देख रहा है। उसे जबर्दस्ती पकड़कर और अधमरा करके एक बूढ़े के साथ ब्याह दिया जाता है, जिसके बेटे-बेटियां उम्र में आल्तीनाई से बड़े हैं। आल्तीनाई का यौवन भी रौद ड़ाला गया होता, यदि वहां सहायता के लिए दूइशेन नाम का एक 18 वर्षीय युवक नहीं पहुंच जाता, जिसे सरकार द्वारा इस गांव में बच्चों को पढ़ाने के लिए भेजा गया है । अपने समस्त यौवन-काल तथा प्रौढ़ावस्था में आल्तीनाई - जो अब एक सुविख्यात वैज्ञानिक बन चुकी है, और विज्ञान अकादमी की सदस्या है - अपने हृदय में अपने पहले अध्यापक के प्रति प्रेम संजोये रहती है । उपन्यास का वर्णन मार्मिक स्मृतियों की श्रृंखला कसे संयोजित है । पुस्तक के आरंभिक़ अंश में लेखक चंगीज आइत्मातोव की अपने गांव के बारे में स्मृतियां हैं जो गांव में एक नये स्कूल के उद्घाटन पर आकर ठहर जाती हैं । इसके बाद आल्तीनाई के स्मृति-चित्रों का सिलसिला शुरू होता हैं आल्तीनाई जो इसी गांव में जन्मी है, जो गांव में खुले पहले स्कूल की छात्रा है और जो अब विज्ञान अकादमी की सदस्या है । गांव के पहले स्कूल का अध्यापक अब डाकिये का काम कर रहा है। आल्तीनाई पहले स्कूल, अध्यापक दुइशेन ओर अपनी जीवन यात्रा का वृत्तान्त लेखक को लिखकर भेजती है । उपन्यास की मूलकथा आल्तीनाई के ही शब्दों में वर्णित है । लेकिन आल्तीनाई के आत्मकथ्य से पूर्व लेखक चंगीज आइत्मातोव कथा का पार्श्व रचते हैं ।

हमारा गांव कुरकुरेव पहाड़ों के दामन में बसा है, जहां अनेक दर्रों में से शोर मचाती पहाड़ी नदियां बहती हैं । गांव के नीचे दूर दूर तक एक सुनहरा मैदान फैला है - विशाल कजाख स्तेपी - जिसकी सीमाओं को काले पहाड़ों की श्रेणियां और क्षितिज के साथ-साथ पश्चिम की ओर जाने वाली रेलवे लाइन की काली रेखा आंकती है । ... गांव के ऊपर पोपलार के दो विशालकाय पेड, एक टीले पर खडे हैं ।

हमारे गांव में इस टीले को, जहां ये पोपलार खड़े हैं, किसी कारण 'दुइशेन का स्कूल' कहा जाता था । ... सुनने में आया था कि किसी जमाने में इस टीले पर एक स्कूल हुआ करता था। हमने उसका नाम-निशान तक नहीं देखा ।

यह घटना 1923 में घटी थी । उस समय आल्तीनाई की उम्र चौदह बरस की थी । वह एक अनाथ लड़की थी और अपने चाचा-चाची के परिवार के साथ रहती थी । उन दिनों 'स्कूल' और 'पढ़ाई' जैसे शब्द इस गांव में बिल्कुल नये और लोगों की समझ के परे थे । कुरकुरेव के लोगों का मानना था, 'हम किसान हैं', मेहनत करके जिन्दगी बसर करते हैं, हमारी कुदाल हमें रोटी देती हैं हमारे बच्चे भी इसी तरह जिन्दगी बसर करेंगे । उन्हें पढ़ने-लिखने की कोई जरूरत नहीं है । पढ़ाई की जरूरत होती है अफसरों-अधिकारियों को, हम तो सीधे सादे लोग हैं ।' गांव में बच्चों को पढ़ाने आये युवा कोमसोमोल दुइशेन ने उन्हें समझाया, 'हम गरीब किसन हैं, ... हमें हमेशा रौंदा गया है, हमेशा हमारा अपमान किया गया है । अब सोवियत सत्ता चाहती है कि हम आखें खोलें, पढ़ें,-लिखें । और इसके लिए बच्चों को पढ़ाना चाहिए ...' ।

इसके बाद दुइशेन ने गांव के ऊपर पहाड़ी पर स्थित एक उजड़े अस्तबल को स्कूल का रुपाकार दिया । एक दिन आल्तीनाई अपनी सहेलियों के साथ उपले बीनने गयी तो उन्होंने स्कूल देखा और अध्यापक दुइशेन से मिलीं । लौटते वक्त आल्तीनाई अपने इकट्ठे किये उपले स्कूल में ड़ाले आयी ताकि सर्द बर्फीले दिनों में बच्चे इनसे गर्मी पा सकें । जबकि उसकी सहेलियों ने ऐसा नहीं किया । आल्तीनाई ने बाद में स्वीकारा, 'उसी दिन जिन्दगी में

पहली बार, कुछ सोचे-विचारे और ड़रे बिना मैंने जिस काम को जरूरी समझा, उसे करने का निश्चय किया और उसे किया भी ।'

दुइशेन घर-घर जाकर बच्चों को इकट्ठा करता । बच्चों को पढ़ाने के लिए राजी करने में उनके अभिभावकों से माथापच्ची करता । जबकि दुइशेन पारंपरिक अर्थ में अध्यापक नहीं था । वह कहता भी था, 'बच्चों, मैं तुम्हें पढ़ना, गिनती करना सिखाऊंगा और यह दिखाऊंगा कि अक्षर और आंकडे कैसे लिखे जाते हैं ... जो कुछ मैं खुद जानता हूं, वह तुम्हें सिखा दूंगा ... ।' और सचमुच उसने अद्‌भु त धैर्य से उन्हें वह सब सिखाया जो वह स्वयं जानता था । हर बच्चे के ऊपर झुक-झुककर उसने यह बताया कि पेंसिल कैसे पकड़ते हैं और उत्साह से बच्चों को वे शब्द समझाये, जो उनकी समझ से बाहर थे ।

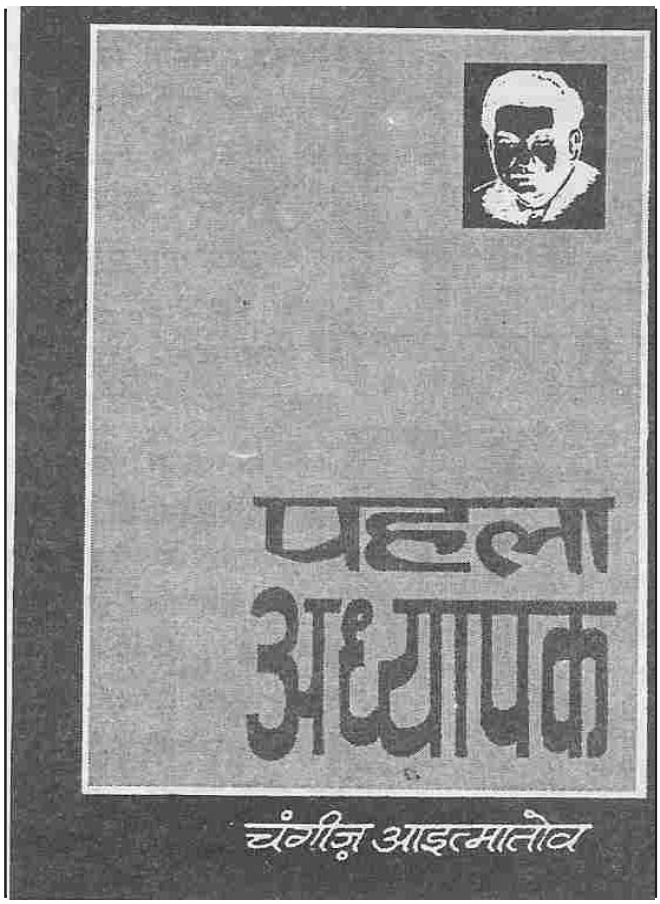

आल्तीनाई अपने संस्मरण में लिखती है : 'मैं आज भी सोचती और हैरान रह जाती हूं कि किस प्रकार वह अर्द्ध-शिक्षित युवक, जो मुश्किल से अक्षर जोड़-जोड़कर पढ़ पाता था, जिसके पास एक भी पाठ्यपुस्तक नहीं थी, यहां तक कि वर्णमाला की पुस्तक तक नहीं थी, कैसे एक ऐसे काम को हाथ में लेने का साहस कर पाया जो वास्तव में महान था । ऐसे बच्चों को पढ़ाना क्या कोई मजाक है, जिनकी पिछली सात पीढ़ियों ने स्कूल का नाम तक न सुना हो और निश्चय ही दुइशेन पाठ्य-कार्यक्रम के बारे में, अध्यापन-विधियों के बारे में कुछ भी नहीं जानता था। या यों कहें कि वह इन चीजों के अस्तित्व तक से अनभिज्ञ था । दुइशेन हमें अन्त:प्रेरणा के बल पर पढ़ाया करता था, अपनी सूझ के अनुसार पढ़ाता, जैसे पढ़ा सकता था, जैसा उसे आवश्यक जान पड़ता था । परन्तु मुझे पूर्ण विश्वास है कि उसका वह उत्साह, वह जोश, जिसके साथ उसने हमें पढ़ाने की कोशिश की, निष्फल नहीं गया। उसने अनजाने ही एक बड़ा कारनामा कर दिखाया । हां, बड़ा कारनामा, क्योंकि उन दिनों हम किरगीज बच्चों के लिए, जिन्होंने कभी अपने गांव से बाहर कदम नहीं रखा था, उस स्कूल की बदौलत अगर उस कच्चे बाडे को स्कूल का नाम दिया जा सकता हो, जिसकी चौडी दरारों में से पहाडों की बर्फ से ढकी चोटियां नजर आया करती थीं - उस कच्ची कोठरी की बदौलत हमारी आंखों के सामने एक नया संसार खुल गया, एक ऐसा संसार जिसके बारे में हमने न कभी सुना था और न कभी देखा था ।'

सर्दी के दिनों में अध्यापक दुइशेन बच्चों को बर्फीला नाला पार कराता । वह एक बच्चे को पीठ पर बिठा लेता, दूसरे को गोद में उठा लेता और इस तरह बारी-बारी सबको नाला पार कराता । बच्चे भी अपने अध्यापक से गहरी अंतरंगता का अनुभव करते । हर महीने के अंत में दुइशेन हल्का केन्द्र जाता और दो-तीन दिन बाद लौटता । ऐसे में बच्चे बड़ी खिन्नता और उदासी अनुभव करते। दुइशेन ने बच्चों की मदद से नाले पर पत्थरों और घास मिट्टी से पार करने का रास्ता बनाया। इस काम में उसे गांव वालों की कोई मदद नहीं मिली ।

अध्यापक दुइशेन से बच्चों के रिश्ते पर आल्तीनाई लिखती हैं: 'मैं सोचती हूं कि उस समय हम सभी अपने अध्यापक को उनकी मानवीयता, उनकी अच्छी भावनाओं और हमारे भविष्य संबंधी उनके स्वप्नों के कारण ही प्रेम करते थे । हम उस समय बच्चे थे, फिर भी मैं सोचती हूं कि हम इस बात को अच्छी तरह समझते थे। वरना हमारे लिए कौन-सी मजबूरी थी कि हम बर्फ के ढेरों और अंधडों में से पहाडी की खड़ी ढलान पर चढ़कर इतनी दूर स्कूल जाते, कौन-सी मजबूरी थी कि उस ठण्डी कोठरी में बैठते, जहां सर्दी के कारण जमी सांस की चेहरे, हाथों और कपड़ों पर सफेद तह जम जाती थी । कोई जोर-जबर्दस्ती से हमें वहां नहीं ले जाता था, हम स्वयं स्कूल जाते थे। वहां केवल बारी-बारी से हम अंगीठी के पास जाकर अपने को गरमाते और अन्य विद्यार्थी अपने-अपनी जगह पर बैठे हुए दुइशेन से पढ़ना-लिखना सीखते रहते थे।'

अध्यापक दुइशेन सर्द रात में इसलिए हल्का केन्द्र से लौट पड़ा कि उसने बच्चों को इस दिन वापस आने का वचन दे रखा था। रास्ते में उसे भेडियों ने घेर लिया, वह बाल-बाल बचकर आ सका। उन्हीं दिनों आल्तीनाई के साथ मिलकर अध्यापक दुइशेन ने स्कूल के बाहर दो छोटे-छोटे पोपलार के पेड़ लगाये थे जो अब दरख्त के रूप में मौजूद हैं । आल्तीनाई की चाची ने उसे एक बूढ़े को ब्याह दिया। जब वे लोग आल्तीनाई की चाची के साथ स्कूल से उसका अपहरण कर ला रहे थे तो अध्यापक दुइशेन ने भरसक उनका प्रतिरोध किया। आल्तीनाई के अनुसार; 'दुइशेन हमारे पीछे-पीछे दौड़ता चला आ रहा था। मार-पीट से अधमरा, खून से लथपथ । उसने हाथ में पत्थर उठा रखा था । और उसके पीछे-पीछे हमारे स्कूल के सारे बच्चे रोते बिलखते दौड़े चले आ रहे थे।' अध्यापक आल्तीनाई को उनसे बचा नहीं सका। लेकिन उसके प्रतिरोध से आल्तीनाई ने प्रेरणा ली और वह अपहर्ता के तम्बू से बाहर निकलने के लिए अपने हाथों से ही सुरंग खोदने के प्रयास में जुट गयी । उसकी वह कोशिश कामयाब हो पाती या नहीं, तभी अध्यापक दुईशेन मिलीशिया मेनों को साथ ले जाकर आल्तीनाई को मुक्त करा लाया।

इसके बाद दुइशेन ने आल्तीनाई को कुछ और बच्चों के साथ ताशकन्द के बालगृह में आगे पढ़ने के लिए भेज दिया। ताल्तीनाई ने एक विशाल नगर में, बड़ी-बड़ी खिड़कियों वाले एक बड़े स्कूल में शिक्षा प्राप्त की, वैसे ही स्कूल में जिसकी दुइशेन चर्चा किया करता था। कामगार स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद उसे मास्को के इंस्टीट्यूट में भेज दिया गया ।

इस मुकाम पर आकर कहानी बदल जाती है । आल्तीनाई ने अध्यापक दुइशेन को पत्र लिखा, जिसमें उसने दुइशेन से अपने प्रेम का इजहार किया था । लेकिन इसका कोई जबाव नहीं आया। बाद में दुइशेन फौज में भर्ती हो गया। आल्तीनाई शोध पूरा कर चुकी थी। ये द्वितीय विश्वयुद्ध के दिन थे । युद्ध खत्म होने के बाद आल्तीनाई गांव गयी तो उसे पता चला कि दुइशेन लापता है। ग्राम-सोवियत को इसी आशय का पत्र प्राप्त हुआ था । उपन्यास में एक और मार्मिक प्रसंग है । 1946 की पतझड़ में आल्तीनाई एक रेलयात्रा के दौरान साइबेरिया से गुजर रही थी । उसे लगा कि बाहर रेलवे केबिन के पास खडा व्यक्ति दुइशेन ही है । उसने जंजीर खींच कर गाडी रुकवा दी । वह भागकर उस व्यक्ति के पास गयी लेकिन वह कोई और निकला । उसे दुइशेन मिला तो तब, जब वह नये स्कूल के उद्घाटन में आयी । वह अब गांव में डाकिये का काम कर रहा था । आल्तीनाई लिखती हैं : '...उस बार मैं अचानक ही और इतनी जल्दी कुरकुरेव से क्यों चली आई ।.... वह कारण यह था कि नये स्कूल के उद्घाटन के समय मेरे प्रति किसी प्रकार का सम्मान प्रदर्शित नहीं किया जाना चाहिए था, सम्मान के पद पर मुझे बैठाने की जरूरत नहीं थी । इसका अधिकारी था हमारा पहला अध्यापक - ... दुइशेन । और हुआ इसके बिल्कुल विपरीत । हम समारोह मना रहे थे, खुशियां मना रहे थे, जबकि यह शानदार आदमी डाक लिये .... स्कूल के उद्घाटन संबंधी पुराने छात्रों के मुबारकवादी तार बांटता फिर रहा था । ..... इसलिए मैं अपने आप से यह पूछती हूं : कब से हमने सीधे-सादे इन्सान का आदर करने की क्षमता खो दी है .... '' ।

आल्तीनाई का संस्मरण खत्म हो जाता है, लेखक चंगीज आइत्मातोव उपसंहार में लिखते हैं : ''.... जीवन को देखो, चुनो, सीखो। दुइशेन और आल्तीनाई के पोपलार वृक्षों के बारे में चित्र बनाओ, उन्हीं पोपलार वृक्षों के बारे में जिन्होंने बचपन में तुम्हें आह्लाद की इतनी घडियां प्रदान की थीं, हालांकि तुम उस वक्त इनकी कहानी नहीं जानते थे । उस लड़के का चित्र बनाओ जो नंगे पांव, धूप में संवलाया हुआ, पोपलार की शाखाओं पर खूब ऊंचे बैठा है और मंत्र-मुग्ध नेत्रों से स्तेपी की रहस्यपूर्ण, अलौकिक दूरियों को देखे जा रहा है । .... एक ऐसा चित्र बनाओ, जिसका शीर्षक हो - 'पहला अध्यापक' ।''

यह पुस्तक पाठकों को विचार के लिए कुछ सवाल छोड़ती है। शिक्षक के लिए उच्च शैक्षिक योग्यता, और प्रशिक्षण पहली आवश्यकता है या बच्चों को सिखाने के प्रति लगन और समर्पण। एक मुख्य सवाल यह उठता है कि क्या शिक्षक अपने को स्कूल की चाहरदीवारी तक सीमित रखे अथवा अपने सामाजिक दायित्व को भी निभाये । यदि दुइशेन आल्तीमाई को कथित बूढ़े पति के चंगुल से मुक्त नहीं कराता तो वह उसकी दूसरी बीबी बनी रहती । बकौल आल्तीनाई, 'तोकोल' यानि दूसरी बीबी । मुझे इस शब्द से कितनी घृणा है ! किस व्यक्ति ने, किस बुरे जमाने में इसे गढा था ? किसी स्त्री के भाग्य में इससे अधिक बुरा, इससे अधिक दु:खद क्या होगा कि वह एक विवश दूसरी बीबी बने, शरीर और आत्मा से गुलाम बने !' दुइशेन उसे न केवल इस अभिशप्त जीवन से मुक्ति दिलाता है बल्कि उसे बलात्कृत होने के इस अपराध-बोध से भी मुक्त कराता है : 'मेरी तो इज्जत लूटी जा चुकी है, मेरा तो पतन हो चुका है।' दुइशेन की प्रेरणा और सक्रिय सहयोग के बिना आल्तीनाई की दूसरी गौरवशाली जिन्दगी संभव नहीं थी ।

किसी किशोर वय छात्रा का अपने युवा अध्यापक के प्रति आकर्षण स्वाभाविक है । एक अध्यापक के रूप में दुइशेन इसे नजरअंदाज कर हतोत्साहित करता है । इस पुस्तक की यह एक बडी सीख हो सकती है । वैसे बच्चों और अध्यापक के बीच संबंधों के सघन और जीवंत रूप इस पुस्तक में बिखरे पडे हैं । ◆